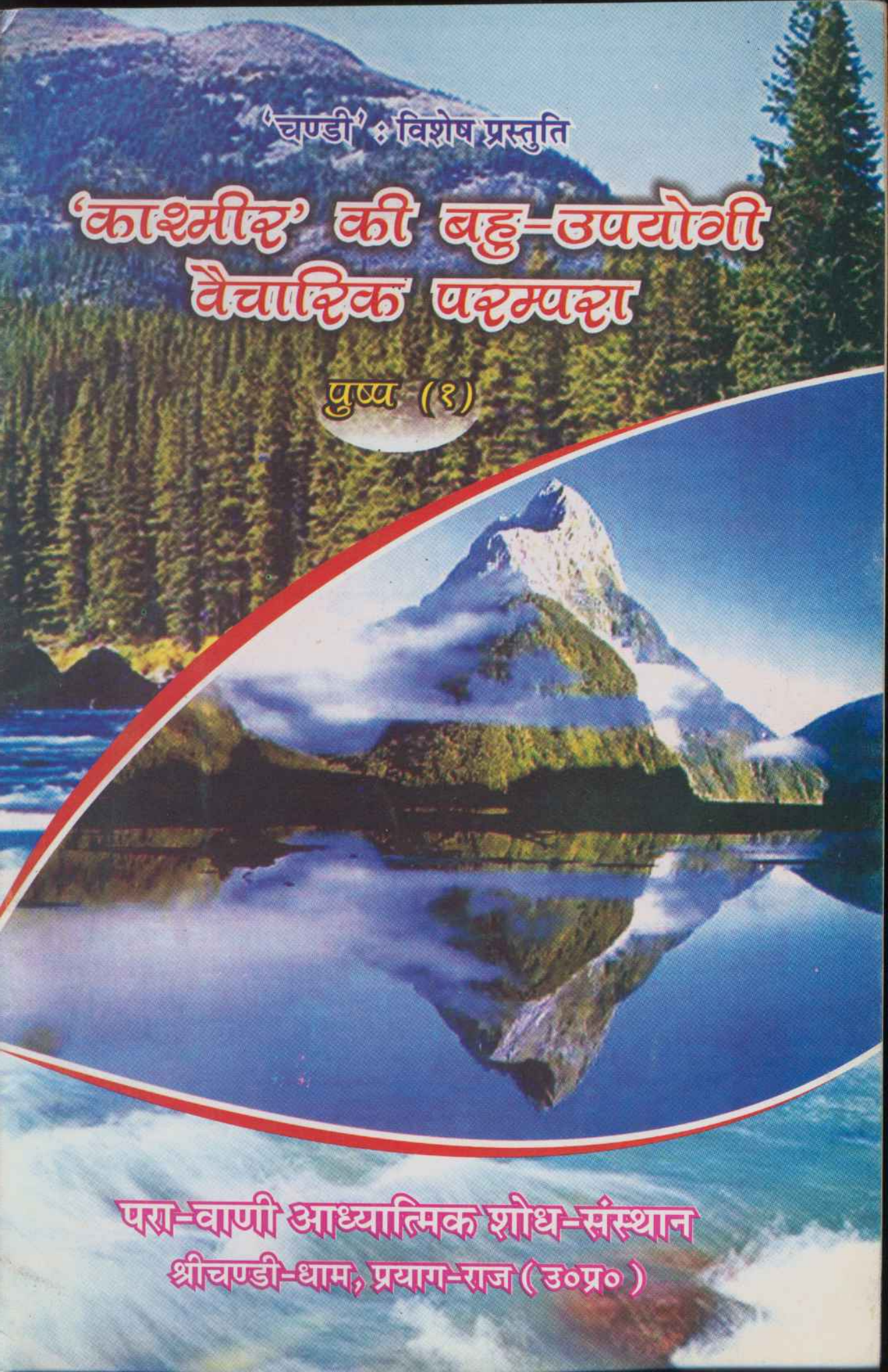

'चण्डी' : विशेष प्रस्तुति

'काश्मीर' की बहु-उपयोगी वैचारिक परम्परा

पुष्प (१)

परा-वाणी आध्यात्मिक शोध-संस्थान
श्रीचण्डी-धाम, प्रयाग-राज (उ०प्र०)

'काश्मीर' कभी 'विद्या' के लिए प्रसिद्ध था.....

- 'काश्मीर' कभी 'विद्या' के लिए प्रसिद्ध था। भारत के कोने-कोने से प्रकाण्ड विद्वान् आशीर्वाद प्राप्त करने व अपने मत, वाद या विचारों को प्रामाणिक सिद्ध करने हेतु 'काश्मीर की यात्रा' करते थे। स्वयं आदि शङ्कराचार्य 'कुरुक्षेत्र' होते हुए 'काश्मीर' की राजधानी 'श्रीनगर' गए थे। वहाँ उन्होंने शारदा देवी के सिद्ध पीठ में अपने भाष्य को प्रमाणित कराया था। कहते हैं, इसके लिए उनके गुरु ने निर्देश दिया था। आदि-शङ्कराचार्य की महत्त्व-पूर्ण यात्रा के प्रमाण-स्वरूप शङ्कराचार्य का मन्दिर 'श्रीनगर' में आज भी स्थित है।
- 'ज्ञान' का प्राचीनतम केन्द्र 'तक्षशिला'-'काश्मीर' प्रदेश के अन्तर्गत था, जिसका हिन्दू, जैन एवं बौद्ध साहित्य में विशेष रूप से उल्लेख मिलता है।
- बौद्ध धर्म के 'महायान'-सम्प्रदाय का जन्म 'काश्मीर' में हुआ था। 'काश्मीर' से ही यह तिब्बत, चीन, जापान, कोरिया में प्रचलित हुआ।
- 'राज-तरङ्गिणी' से स्पष्ट होता है कि जब 'काश्मीर' में अनेक प्राचीन ग्रन्थ नष्ट हो रहे थे, उस समय 'काश्मीर' की कुछ प्राचीन पुस्तकें लेकर विद्वान् सुदूर दक्षिण भारत गए। 'काश्मीर' के विद्वान् श्रीयुद्ध भट्ट कर्नाटक प्रदेश गए और वहाँ आपने 'अथर्व-वेद' का प्रचार किया। सेरिया भट्ट ने वहाँ 'अथर्व-वेद' की पाठ-शाला खोली।
- 'तन्त्र-शास्त्रों' में मुख्य रूप से तीन प्रकार के 'क्रमों' का उल्लेख है- १. काश्मीर, २. केरल, ३. गौड़। इनमें 'काश्मीर'-क्रम को 'ज्ञान'-प्रधान बताया गया है।
- रुद्रट, लल्लट, शंकुक, आनन्दवर्धन, भट्टनायक, भट्टथट्टा, मट्टेन्दुराजा, वसुगुप्त, सोमानन्द, उत्पल, अभिनव गुप्त, कुन्तक, महिमभट्ट, क्षेमेन्द्र, मम्मट आदि-आदि अनेक अत्यन्त प्रसिद्ध विद्वानों की जन्म-भूमि 'काश्मीर' ही है।
- मम्मट का 'अलङ्कार', वामन की 'रीति', आनन्दवर्धन की 'ध्वनि', कुन्तल की 'वक्रोक्ति', महिम भट्ट का 'अनुमान', क्षेमेन्द्र का 'औचित्य' आदि काव्य-शास्त्र के प्रसिद्ध सिद्धान्त 'काश्मीर' से ही प्रकट हुए हैं।
- वामन एवं जयादित्य द्वारा व्याकरण के सूत्रों की टीका ७वीं शताब्दी में 'काश्मीर' में ही लिखी गई।

'चण्डी' : विशेष प्रस्तुति

'काश्मीर' की बहु-उपयोगी वैचारिक परम्परा

पुष्प (१)

सम्पादक

रमादत्त शुक्ल

ऋतशील शर्मा

प्रकाशक

पण्डित देवीदत्त शुक्ल स्मारक

परा-वाणी आध्यात्मिक शोध-संस्थान

श्रीचण्डी-धाम, प्रयाग-राज (उ०प्र०)

सचल : ९२३५९१००७१

अनुदान १०/-

दो शब्द...

'**भारत**' में ज्ञान का प्राचीनतम केन्द्र '**काश्मीर**' था। इस सम्बन्ध में हम भारतवासियों को आज बहुत कम जानकारी है। आवश्यकता है कि न केवल अधिक-से-अधिक भारतवासी अपितु पूरा विश्व यह जाने कि '**काश्मीर**' कभी कितने उच्च कोटि का '**ज्ञान का केन्द्र**' था।

'**काश्मीर**' की बहु-उपयोगी वैचारिक परम्परा आज '**काश्मीर**' के महान् ग्रन्थों में बन्द पड़ी है! थोड़े से पृष्ठों में उसका वर्णन सम्भव नहीं है। यहाँ उसकी एक झलक मात्र देने का प्रयास हो रहा है। यदि इस झलक से लोगों को '**काश्मीर**' की बहु-उपयोगी वैचारिक परम्परा को जानने, समझने की कुछ रुचि होगी, तो हम अपने प्रयास को सफल मानेंगे। साथ ही, '**काश्मीर**' **की बहु-उपयोगी वैचारिक परम्परा** के **आगामी पुष्पों** में अन्य महत्त्व-पूर्ण बातों के साथ-साथ मध्य एवं आधुनिक काल के '**काश्मीर**' के विलक्षण **सन्तों/विद्वानों** के बारे में भी कुछ विशेष सन्दर्भों को देने का प्रयास किया जाएगा।

अन्त में, हम '**सर्वज्ञ-पीठ**', काश्मीर के वर्तमान **शङ्कराचार्य स्वामी श्रीअमृतानन्द देवतीर्थ जी महाराज** एवं **जम्मू-काश्मीर विचार-मंच** तथा उन लोगों के प्रति अपना आभार प्रदर्शित करते हैं, जिन्होंने प्रस्तुत पुस्तक-माला के प्रकाशन के लिए हमें विशेष रूप से प्रोत्साहन दिया।

प्रयाग, महा-शिवरात्रि, सं० २०६३ वि०
(१६ फरवरी, २००७)

-ऋतशील शर्मा

***

अनुक्रम

- भारत का हृदय-'काश्मीर' ५
- सर्वज्ञ-पीठ-'काश्मीर' ७
- 'काश्मीर' का अनूठा ज्ञान-विज्ञान ८
- 'ज्ञान' और 'अज्ञान' ९
- 'जनकः कीदृक्?' १०
- 'काश्मीर'-सूत्र ११
- 'प्रत्यभिज्ञा-दर्शन' १३
- 'पति'-भाव और 'पशु'-भाव १४
- 'हेय' एवं 'उपादेय' १५
- प्राचीन 'काश्मीर' १६

भारत का हृदय-'काश्मीर'

स्वतन्त्र भारत के पहले प्रधान-मन्त्री **पं० जवाहरलाल नेहरू** से लेकर आज तक के सभी प्रधान-मन्त्री एक स्वर से यह कहते हैं कि **भारत का हृदय-'काश्मीर'** है किन्तु हम भारतवासियों को **'काश्मीर'** के सम्बन्ध में आज भी सही जानकारी नहीं है। उदाहरण के लिए हममें से बहुत कम लोगों को ज्ञात है कि आज से लगभग २ हजार वर्ष पूर्व **'काश्मीर'** में **भारत की प्राचीन ज्ञान-मय परम्परा** के अनुरूप, **मानव-मात्र के अधिकतम कल्याण की भावना से सुन्दर तर्कों के साथ विस्तार से अनेक प्रकार की चर्चाएँ** भी हुई थीं।

अत: हमारी यह मान्यता है कि हम भारतवासियों को सर्व-प्रथम **'काश्मीर'** में खोजे गए उन **बहु-उपयोगी मानव मूल्यों/निष्कर्षों** को जानना व समझना ही होगा, जो **सम्पूर्ण प्राचीन भारतीय प्रज्ञा** के अनुशीलन से उपजे थे और आज भी **मानव-समाज के लिए विशेष रूप से प्रासङ्गिक** बने हुए हैं।

टी०वी०, समाचार-पत्र एवं पत्रिकाएँ आज **'काश्मीर'** की भौगोलिक सुन्दरता, **'काश्मीर'** की अनेकानेक विकट समस्याओं से हम सभी भारतवासियों को अपने-अपने ढङ्ग से परिचित करा रही हैं किन्तु **'काश्मीर' की उत्कृष्ट प्राचीन वैचारिक परम्परा** के सम्बन्ध में आज भी हमें बतानेवाला कोई नहीं है। जबकि **'काश्मीर' की उत्कृष्ट वैचारिक परम्परा** ही **'काश्मीर'** को वास्तविक रूप में **भारत का हृदय** बनाती है।

'हृदय'-शब्द संस्कृत भाषा का है। संस्कृत भाषा के **'हृदयम्'**-शब्द में तीन अक्षर हैं- (१) **हृ**, (२) **द**, (३) **यम्**। इनमें-

(१) **'हृ' अक्षर-** 'हृ ञ् हरणे'-धातु से बना है। इससे **आहरण-भाव, आदान-भाव, संग्रह-भाव का बोध** होता है।

(२) **'द' अक्षर-**'दो अवखण्डने'-धातु से बना है। इससे **विसर्ग-भाव, त्याग-भाव, खण्डन-भाव का बोध** होता है।

(३) **'यम्' अक्षर-** से **आहरण व विसर्ग-दोनों के संयमन, नियमन का बोध** होता है।

इस प्रकार संस्कृत भाषा के **'हृदयम्'**-शब्द से **'हृदय'**-तत्त्व के सम्बन्ध में तीन बातें स्पष्ट होती हैं-

- जो शक्ति का संग्रह करती है, लेती रहती है अर्थात् 'ह्'।
- जो शक्ति का विसर्जन करती है अर्थात् 'द'।
- जो शक्ति के संग्रह और विसर्जन-दोनों की पोषण-भाव से प्रतिष्ठा करती है अर्थात् 'यम्'।

इस प्रकार संस्कृत-भाषा के **'हृदय'**-शब्द की उक्त तीनों बातों को ध्यान में रख कर हम निरीक्षण करें, तो हमें ज्ञात होता है कि **'काश्मीर' वास्तविक रूप से भारत का हृदय** है, क्योंकि-

- **'काश्मीर'**-भारत का वह भू-भाग है, जहाँ **'हृदय'**-शब्द के प्रथम **'ह्'**-अक्षर के अनुसार **भारतीय मूल्यों का सम्यक् रूप से आहरण, आदान, संग्रह** हुआ है।
- **'काश्मीर'**-भारत का वह भू-भाग है, जिसने **'हृदय'**-शब्द के **'द'**-अक्षर के अनुसार **भारतीय मूल्यों का न केवल संग्रह किया; अपितु उन्हें शोधित कर नए मूल्यों के रूप में सम्पूर्ण भारत को पुनः दिया।**
- **'काश्मीर'**-भारत का वह भू-भाग है, जो **हृदय**-शब्द के तीसरे अक्षर **'यम्'** के अनुसार आज भी उक्त दोनों क्रियाओं को बनाए रखने के उद्देश्य से **भारत की राजनैतिक, आर्थिक और सामाजिक ऊर्जा के नियमन का केन्द्र-विन्दु** है।

अतएव आज सबसे पहली आवश्यकता है कि-

- **'काश्मीर' की बहु-उपयोगी वैचारिक परम्परा को समझा जाए! उसे केवल एक सीमान्त भू-भाग न समझा जाए!**
- **'काश्मीर' द्वारा दिए गए मानव-समाज के लिए बहु-उपयोगी मूल्यों को पहचाना जाए और उनके बारे में पूरे विश्व को बताया जाए!**
- **'काश्मीर' की वास्तविक पहचान को फिर से प्रतिष्ठित किया जाए!**
- **'काश्मीर' में सम्पूर्ण मानव समाज के लिए क्या उपादेय है? क्या हेय है? आदि प्रश्नों पर पूर्ण स्वतन्त्रता एवं सुन्दर तर्कों के साथ जो विचार-विमर्श होता था, उस प्रक्रिया को फिर से सुनियोजित ढङ्ग से बढ़ाया जाए!**

'सर्वज्ञ-पीठ', काश्मीर

- 'काश्मीर'– भारत का उच्च कोटि का प्राचीनतम ज्ञान का केन्द्र था।
- 'काश्मीर'–नाम संस्कृत भाषा के दो शब्दों 'काश' और 'मीर' से बना है। 'काश' का अर्थ है-उज्ज्वल या सुन्दर। 'मीर' का अर्थ है-समुद्र या सीमा। इस प्रकार 'काश्मीर'-नाम का अर्थ है-'उज्ज्वल समुद्र' या 'उज्ज्वल सीमा'। ये दोनों अर्थ भौगोलिक रूप से सत्य हैं। आज भी भारत की उज्ज्वल सीमा-'काश्मीर' ही है।
- भारत के अनेक प्राचीन ग्रन्थों की रचना 'काश्मीर' में हुई थी।
- महा-भारत, तीर्थ-यात्रा-पर्व में उल्लिखित है कि-

  काश्मीर-मण्डलं चैतत्, सर्व-पुण्यमरिन्दम।
  महर्षिभिश्चाह्युषितं, पश्येदं भ्रातृभिः सह।।
  यत्रोत्तराणां सर्वेषामृषीणां नाहुषस्य च।
  अग्नेश्चैवात्र संवादः, काश्यपस्य च भारत!।।

अर्थात् हे शत्रुओं को जीतनेवाले! यह सभी प्रकार से पुण्य 'काश्मीर'-मण्डल है, जहाँ बहुत से महर्षि निवास करते हैं। बन्धु-बान्धवों के सहित इसका दर्शन करो। हे भारत! यहाँ उत्तर के समस्त ऋषि, नहुष-कुमार ययाति, अग्नि और कश्यप का संवाद हुआ था।

- अथर्व-वेद की 'पिप्पलाद'-शाखा की एक-मात्र प्रति 'काश्मीरी'-लिपि में १८वीं शताब्दी में एक अंग्रेज इतिहासकार को 'काश्मीर' में मिली थी। इससे यह सिद्ध होता है कि काश्मीरी भाषा में वेदों के लिपिकरण का दुरूह कार्य भी हुआ था।
- चारों वेदों व उनकी विभिन्न शाखाओं, उपनिषदों, स्मृतियों, सांख्य, योग, मीमांसा, जैन-बौद्ध-चार्वाक-सिद्धान्तों-सम्पूर्ण प्राचीन ज्ञान-विज्ञान का सम्यक् अध्ययन 'काश्मीर' में हुआ था। प्रमाण के लिए ५-१०वीं शताब्दी के 'काश्मीर' में लिखे गए ग्रन्थों को देखा जा सकता है। इन ग्रन्थों में उक्त प्राचीन सिद्धान्तों की न केवल भरपूर चर्चा हुई है, अपितु उनके आधार पर विभिन्न मानवीय समस्याओं पर तर्क-सङ्गत निर्णय लेने का प्रयास भी हुआ है।
- 'काश्मीर' में चारों वेदों के अध्ययन-अध्यापन की विधि-वत् परम्परा थी। ग्यारहवीं शताब्दी में रचित 'शक्ति-सङ्गम-तन्त्र' में कहा गया है-

  ऋक् काश्मीरो यजुश्चैव, साम-काश्मीर एव च।
  अथाथर्वण-काश्मीरो, दिव्य-सिद्धादि-मानवैः।।
  सर्व-दिव्यस्तु यः प्रोक्तः, स काश्मीरेति कीर्तितः।

'काश्मीर' का अनूठा ज्ञान-विज्ञान

- **'काश्मीर'** के अनूठे ज्ञान-विज्ञान के अनुसार **'क्रीड़ा'-परायण परमेश्वर की लीला ही सभी प्रकार की घटनाओं का कारण** है। जिस प्रकार **'नट'** जान-बूझकर नाना प्रकार का अभिनय करता है, **'परमेश्वर'** भी उसी तरह अपनी **'इच्छा'**-मात्र से नाना प्रकार की भूमिका ग्रहण करते हैं।
- दूसरे शब्दों में **'परमेश्वर'-सर्व-समर्थ** हैं। वे अपने स्वरूप को ढँकने में भी समर्थ हैं और प्रकट करने में भी समर्थ हैं। जब वे अपने स्वरूप को ढँकते हैं, तब भी उनका मूल स्वरूप लुप्त नहीं होता। जिस प्रकार भगवान् सूर्य अपने द्वारा सृजन किए हुए मेघ से अपने को ढँकवा देते हैं, उसी प्रकार सृष्टि में **'परमेश्वर'** लीला करते हैं। वे लीला के द्वारा **'अज्ञानता'**-रूपी मेघों के घनघोर आवरण के पीछे अपने मूल स्वरूप को छिपा देते हैं और जिस प्रकार 'सूर्य' आच्छादित होकर भी अनाच्छादित रहते हैं, ठीक वैसे ही **'परमेश्वर'** अपने मूल स्वरूप को पुनः प्रकट भी करते हैं।
- **'काश्मीर' की अनूठी 'ज्ञान'-परम्परा** ने **'आत्मा'** को तीन नहीं **'पञ्च-कृत्य-कारी'** बताया है। यथा-१. सृष्टि, २. स्थिति, ३. संहार, ४. अनुग्रह और ५. तिरोधान। स्पष्ट है कि **'काश्मीर' की 'ज्ञान-परम्परा'** में **'आत्मा'** के सम्बन्ध में विलक्षण दिशा-निर्देशन है। यहाँ की अनूठी वैचारिक परम्परा में **'आत्मा'**-द्वैत अर्थात् प्रपञ्च से न तो भीत या त्रस्त दिखाई पड़ती है, न ही वह प्रपञ्च से भिन्न दिखती है। अच्छा या बुरा सब कुछ **'आत्मा'** का ही स्फुरण दिखता है।
- **'काश्मीर' की अनूठी वैचारिक परम्परा** ने **'माया'**, **'प्रपञ्च'**, **'अज्ञानता'** को स्वीकारने का मार्ग बताया है। उससे भागने या डरने का मार्ग नहीं बताया।
- उपनिषद् के महा-वाक्य-**'सर्वं खल्विदं ब्रह्म'** के अनुसार **'काश्मीर' के ज्ञान-विज्ञान 'ब्रह्म'** और **'माया'** को एक ही वस्तु मानते हैं। वे **'ब्रह्म'** को सत्य, **'माया'** को मिथ्या नहीं मानते। उनके अनुसार **'जीव'**-सत्य है। **'जगत्'**-सत्य है। सब कुछ **'शिव'-मय** है। विश्व का वैचित्र्य-**'एक परमेश्वर का ही विलास'** है।

'ज्ञान' और 'अज्ञान'

'अज्ञान' का अर्थ 'ज्ञान' का अभाव नहीं है!

'अज्ञान'-शब्द का अर्थ है-'अपूर्ण ज्ञान' न कि 'ज्ञान का अभाव'।

- **'ज्ञान'** और **'अज्ञान'** के सम्बन्ध में हजारों वर्ष पूर्व **'काश्मीर'** में महत्त्व-पूर्ण चर्चाएँ हुई थीं। तब **'ज्ञान'** क्या है?, **'अज्ञान'** क्या है? इन प्रश्नों के सुलझे हुए उत्तर किसी के पास नहीं थे। **'काश्मीर'** में इस सम्बन्ध में विशेष विवेचनाएँ हुईं और निम्न-लिखित महत्त्व-पूर्ण निष्कर्षों पर पहुँचा गया कि-

  'ज्ञान' अर्थात् जानकारियाँ दो प्रकार की हैं-

  (१) **'द्वैत की प्रथा'** पर आधारित जानकारियाँ।

  (२) **सर्वत्र समस्तता, सम-रसता से भरपूर** जानकारियाँ।

- जब **समस्तता, सम-रसता से भरपूर जानकारियों** के स्थान पर, **वस्तु-स्थान-नाम आदि द्वैत-प्रथात्मक जानकारियों** की बहुलता हो जाती है, तब ये जानकारियाँ अर्थात् **'ज्ञान'** ही **'अज्ञान'** बन जाते हैं।
- **वस्तु, स्थान, नाम आदि पर आधारित जानकारियाँ** भेद-भाव के सङ्कोचों से सिकुड़ी होती हैं तथा ये **पूर्ण ज्ञान की प्राप्ति** में बाधा डालनेवाली होती हैं। **पूर्ण ज्ञान की प्राप्ति** के लिए इन जानकारियों का परित्याग अत्यन्त आवश्यक है।
- **सभी प्रकार की जानकारियों को प्राप्त करने का लक्ष्य** एक है-**'पूर्णता'** को प्राप्त करना।
- **'पूर्णता'** प्राप्त करने के लिए यह आवश्यक है कि **वस्तु, स्थान, नाम आदि से सम्बन्धित संकुचित जानकारियों** से ऊपर उठते हुए क्रमशः **सम-रसता से भरपूर जानकारियों** को प्राप्त किया जाए।
- इस प्रकार **उत्तरोत्तर ज्ञान** प्राप्त करते हुए **पूर्ण प्रथा** को प्राप्त कर ही हम **परम शान्ति** को प्राप्त कर सकते हैं।
- जहाँ **एक-के-बाद एक ज्ञान की प्राप्ति** की सम्भावना होती है, वहाँ ही **शान्ति** होती है-

यत्तु ज्ञेयस-तत्त्वस्य, पूर्ण-पूर्ण-प्रथात्मकम् ।
यद् उत्तरोत्तरं ज्ञानं, तत् तत् संसार-शान्तिदम् ।।

'जनकः कीदृक्?'

''हम सबको उत्पन्न करनेवाला किस प्रकार का है?''

उक्त प्रश्न का उत्तर देते हुए, आज से लगभग २००० वर्ष पूर्व 'काश्मीर' में विद्यमान विद्वानों ने कहा था कि–

''भरित-तनुः। 'भरिता' सर्वाकाङ्क्षा-संक्षयात् पारिपूर्ण्येन पूरिता 'तनु' स्वभावो यस्य सः अनन्योन्मुखतया स्वतन्त्र इति यावत्। अतएव 'पञ्चभिः' चिदानन्देच्छा-ज्ञान-क्रियात्मभिः 'मुखैः'..... सदैव पञ्च-कृत्यकारीत्यर्थः।''

अर्थात्–

- हम सबको उत्पन्न करनेवाला–'समस्त इच्छाओं की पूर्णता के महा-भाव से पूरित स्वभाववाला है।'
- किसी के प्रति निकटता का भाव न रखने के कारण वह 'स्वतन्त्र' है।
- उसकी 'पाँच मुख्य क्रियाएँ' हैं–(१) चिद्, (२) आनन्द, (३) इच्छा, (४) ज्ञान और (५) क्रिया। इन पाँच क्रियाओं के द्वारा वह 'पाँच प्रकार के कर्म' करता है– (१) सृष्टि, (२) स्थिति, (३) संहार, (४) तिरोधान और (५) अनुग्रह।
- उसके 'भरित-तनुः' होने से, उसकी पूर्णता का ज्ञान होता है।
- भावों के प्रकटीकरण एवं समाप्ति हेतु वह किसी पर भी आश्रित नहीं है।

अतएव सदैव ध्यान रखना चाहिए कि–

- हम सबको उत्पन्न करनेवाला 'हम सबमें व्याप्त' है।
- हमें उच्च स्तर पर 'राग-मोह' आदि से युक्त भावोंवाली मानवी विवेचनाएँ नहीं करनी चाहिए।
- हमारा कर्त्तव्य है कि हम जो कुछ भी करें, ज्ञान की भावना में रहकर करें।

न कुर्यान् मानवीं बुद्धिं, राग-मोहादि-संयुताम् ।
ज्ञान - भावनया सर्वं, कर्तव्यं साधकोत्तमैः ।।

'काश्मीर-सूत्र'

'काश्मीर' में स्वयं भगवान् भूतनाथ ने वसुगुप्त नामक सिद्ध को स्वप्न में उपदेश देकर, महा-देव पर्वत की तलहटी (वर्तमान दाद्दीग्राम) में विद्यमान एक उपल (वर्तमान शङ्कर-पल) पर उत्कीर्ण सूत्रों का पता बताया था और उनके रहस्यार्थों को भी समझाया था। साथ ही, यह आदेश भी दिया था कि वह वहाँ से उन सूत्रों का संग्रह करके, उनमें निहित रहस्य को लोगों को समझाएँ, जिससे उनका कल्याण हो। कहते हैं, सिद्ध वसुगुप्त ने भगवान् के आदेशानुसार वहाँ से सूत्रों का संग्रह किया और भट्ट-कल्लट आदि शिष्यों को बताया। ये सूत्र 'काश्मीर-सूत्र' के नाम से प्रसिद्ध हैं। इन सूत्रों के अनुसार–

- विश्व के अणु-अणु में स्पन्द-मय पारमेश्वरी शक्ति के स्वातन्त्र्य का प्रसार है।
- स्पन्द-मयी पारमेश्वरी शक्ति अपने स्वातन्त्र्य के द्वारा 'जड़'-वर्ग को भी 'चेतन'-धर्मा बना देती है। अतः सतत प्रयासों के द्वारा इसका साक्षात्कार करने से ही मानव-जन्म सफल होता है।
- तीन अन्तःकरण (१. मन, २. बुद्धि, ३. अहङ्कार), पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ (१. नेत्र, २. कर्ण, ३. नासिका, ४. रसना, ५. त्वचा), पाँच कर्मेन्द्रियाँ (१. हाथ, २. पैर, ३. जिह्वा, ४. गुदा, ५. लिङ्ग)–ये सब स्वयं 'अचेतन' हैं। इनके द्वारा जो कार्य होता है, वह इनका अपना धर्म नहीं है। 'चिति'-शक्ति की विशेष स्पन्दों की धाराएँ इनमें सञ्चारित होकर, इनको 'चेतन'-धर्मा बना देती हैं। इससे ये 'चेतन' की तरह इच्छा-मात्र से कार्य करते प्रतीत होते हैं। कार्य करते समय ऐसा लगता है कि ये स्वयं कार्य कर रहे हैं, परन्तु वास्तव में कार्य करने की शक्ति इनसे भिन्न होकर इनमें सुशृङ्खलित होती है और ये उसके साधन-मात्र होते हैं। यदि सभी कार्य करना इनका अपना धर्म होता, तो 'जीव' की मृत्यु हो जाने के बाद भी ये अपना कार्य करते रहते। 'जीव' की मृत्यु के बाद ये अपना कार्य करने की क्षमता नहीं रखते, इससे स्पष्ट है कि कार्यों को ये स्वयं नहीं करते हैं। 'कार्य' करते समय ये 'कार्य करनेवाले' जैसे प्रतीत मात्र होते हैं।

- **परमेश्वर की 'स्वातन्त्र्य'-शक्ति** अथवा **'स्पन्द'-शक्ति** ही वह **एक-मात्र 'शक्ति'** है, जो हम-सबको **'चेतन'-धर्मा** बनाती है। यह **'शक्ति'** अनन्त धाराओं में प्रवाहित होकर संसार के कण-कण, अणु-अणु का रूप धारण करती है।

- **परमेश्वर की 'स्वातन्त्र्य'-शक्ति** जब संसार में **बाह्य प्रसार** की ओर उन्मुख होती है, तब वह **'अहं'** अर्थात् **'मैं'** और **'इदं'** अर्थात् **'यह'**-इन दो **'भाव'-मण्डलों** का प्रकाशन करती है। **बाह्य प्रसार** की इस अवस्था में, **'अहं'** और **'इदं'** अर्थात् **'मैं'** और **'यह'**-भाव-मण्डलों के द्वारा **परमेश्वर की 'स्वातन्त्र्य'-शक्ति** उल्टा आचरण भी करती है और सम्पूर्ण विश्व को **अनेक आपत्तियों, जन्म-मरण का स्थान** बना देती है। **अनेक आपत्तियों, जन्म-मरण** के बीच **परमेश्वर की 'स्वातन्त्र्य'-शक्ति** ही जब **संसार-भाव** अर्थात् **प्रपञ्च** के विरुद्ध सबको एक करने की दृष्टि से जानने-विचारने का आचरण करती है, तब **परमेश्वर की 'स्वातन्त्र्य'-शक्ति** के कृपा-पात्र बने हुए लोगों में **'परमेश्वर' की 'अनेकता' में 'एक' होने के भाव का विकास** होता है।

- **'संसार'-भाव** की अवस्था में, **परमेश्वर की 'स्वातन्त्र्य'-शक्ति** अनेक प्रकार के भेदों अर्थात् **'पशु'-भाव** में पड़े हुए **'जीव'-'परमेश्वर'** को मोह में डाले रहती है। उसकी **'बुद्धि'** में, संसारी **'हेय'**-पदार्थों के प्रति **'अहं'** अर्थात् **'मैं'-भाव की आसक्ति का मूर्खता-पूर्ण हठ** उत्पन्न करती है, जिससे उसे अपने **वास्तविक 'विश्वात्म'-भाव का ज्ञान** ही नहीं रहता!

- **'संसार'-भाव** से विद्रोह की अवस्था में, **परमेश्वर की यही 'स्वातन्त्र्य'-शक्ति निर्मल हृदयवाले पुरुषों को 'परमेश्वर'-भाव अर्थात् 'अनेक' में 'एक' होने के भाव पर प्रतिष्ठित** भी करती है। पहले से सावधान हृदयों में यह भेद-रूपी **'मूढ़'-भावों** को उत्पन्न नहीं करती।

'प्रत्यभिज्ञा-दर्शन'

'काश्मीर' में मनुष्यों को अपने वास्तविक स्वरूप से परिचित कराने के लिए एक-दो ग्रन्थ नहीं अपितु अनेक ग्रन्थ लिखे गए थे। इन ग्रन्थों में प्रस्तुत विचार-दर्शन को **'प्रत्यभिज्ञा-दर्शन'** के नाम से जाना जाता है। इस विचार-दर्शन के अनुसार-

- **'विश्व'** का हेतु अर्थात् कारण-**'चिति'-शक्ति** है।
- **'चिति'-शक्ति** से ही जगत् की व्यवस्था होती है।
- **'चिति'-शक्ति**-प्रकाश-मयी है। सभी इसी से **'प्रेरणा'** प्राप्त करते हैं। कोई इसका उल्लङ्घन नहीं कर सकता।
- **'चिति'-शक्ति** स्वतन्त्र रूप से विश्व की रचना-व्यवस्था करती है। किसी अन्य की इच्छा से यह प्रेरित नहीं होती।
- **'चिति'-शक्ति** के गर्भ में जो व जैसा **'विस्तार'** सूक्ष्म रूप से छिपा रहता है, उसे ही वह प्रकट करती है। अत: **'विस्तार'** अर्थात् **'जगत्'** भी सदैव प्रकाशात्मक सत्ता में विद्यमान है और वह कभी **असत्य, मिथ्या** नहीं हो सकता।
- **'ग्राह्य'** अर्थात् ग्रहण करने योग्य और **'ग्राहक'** अर्थात् ग्रहण करनेवाला के भेद से जगत् **'अनेक'** प्रकार का दिखाई देता है। मूलत: वह **'एक'** है।
- **'चिति'-शक्ति**-चेतन अर्थात् **प्रकाश-मय** होने पर भी **संकुचित स्वरूपवाली** है। **'चिति'-शक्ति** में डूबा हुआ सम्पूर्ण जगत्-**'ग्राह्य'** अर्थात् **'भाव'** और **'ग्राहक'** अर्थात् **'कर्त्ता'** के रूपों से **'प्रकाश'-मय** भी है और **'संकुचित'-स्वरूपवाला** भी है।
- **'चिति'-शक्ति में सङ्कोच की प्रधानता** होने पर विषयों के ग्रहण करने की ओर उन्मुखता होती है और **'भेद'** का विस्तार होता है। ऐसी अवस्था में **'इच्छा'-शक्ति** संकुचित होकर-अपूर्ण-मन्यता-रूप **'आणव'-मल** को प्रकट करती है। **'ज्ञान'-शक्ति**-'भेद' में व्याप्त होकर सर्वज्ञत्व के स्थान पर किञ्चित् अज्ञत्व होकर बन्धन-रूपी **'मायीय'-मल** को प्रकट करती है। **'क्रिया'-शक्ति** भी किञ्चित्-कर्तृत्व-रूप से शुभाशुभ स्वरूपवाले **'कार्म'-मल** को प्रकट करती है। ऐसी स्थिति में, सर्व-शक्ति-सम्पन्न **'जीव'**-**'दरिद्र संसारी'** बन जाता है।
- **'चिति'-शक्ति में सङ्कोच की न्यूनता** होने पर जीवों की **'इच्छा-ज्ञान-क्रिया'-शक्ति में परमेश्वर की भक्ति** प्रकट होती है, जिसके प्रभाव से वे परम-तत्त्व को जान लेते हैं और इस विश्व को उस स्वरूप का विकास समझ कर **'जीवन्मुक्त'** हो जाते हैं।

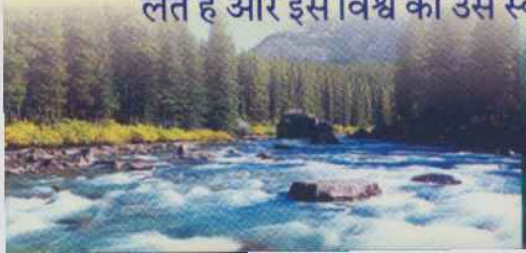

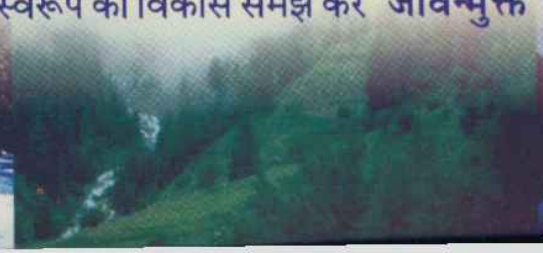

'पति'-भाव और 'पशु'-भाव

'काश्मीर' के आचार्यों के अनुसार **सतत् स्पन्द-मयी पारमेश्वरी सत्ता**–१.**'पति'**-भाव, २.**'पशु'**-भाव और ३.**'जड़'**-भाव–इन तीन रूपों में प्रकाशमान है।

'पति'-भाव और **'पशु'**-भाव के सम्बन्ध में **'काश्मीर'** के आचार्य उत्पल देव का कहना है कि–

- जिस अवस्था में **समस्त 'भाव'-मण्डल** अर्थात् **'मैं'**, **'यह'** और **'वह'–अपने अङ्ग जैसा ही अभिन्न** प्रतीत होता है, उसको **'पति'**-भाव कहते हैं। इसे **'पति'**-भाव इसलिए कहते हैं, क्योंकि इसका **'स्वातन्त्र्य' समस्त 'भाव'-वर्ग** पर छाया रहता है और यह सभी भावों को अपने 'चैतन्यामृत' के बिन्दुओं से सिञ्चित करता रहता है।
- जिस अवस्था में मायीव आवरण में ढँके रहने के कारण, **समस्त भाव-मण्डल** अर्थात् **'मैं'**, **'यह'** और **'वह'–अपने से भिन्न** प्रतीत होते हैं, उसे **'पशु'**-भाव कहते हैं। इस अवस्था में जीव–**'भाव'-वर्ग का अधिपति न बनकर, उनका दास** बनता है। भावों का उथल-पुथल उसके लिए **'बन्धन'** बन जाता है, जिसमें फँसकर वह **दुर्गम पथ का यात्री** बन जाता है।
- **'पति'**-भाव और **'पशु'**-भाव के सम्बन्ध में **'काश्मीर' के आचार्यों** का विलक्षण निष्कर्ष यह है कि इनमें भी आपस में कोई मूलभूत अन्तर नहीं है। दोनों के पीछे **'स्पन्द'-मयी पूर्णाहन्ता** का बल है। अन्तर केवल इतना है कि **'पति'**-भाव की अवस्था में **'स्पन्द'-मयी पूर्णाहन्ता** का बल अपरिमित तथा पूर्ण स्वतन्त्र होता है, जबकि **'पशु'**-भाव की अवस्था में बल की आंशिक विद्यमानता और आंशिक स्वतन्त्रता होती है।
- **'पति'**-भाववाले–असीम रूप में सब कुछ युग-पत् अर्थात् मिल-जुल कर चाहते हैं, जानते हैं और करते हैं।
- **'पशु'**-भाववाले–ससीम रूप से और निश्चित क्रम में कुछ ही चाहते हैं, जानते हैं और करते हैं।
- **'पति' एवं 'पशु'**–दोनों रूपों में **'क्रिया-शीलता'** वास्तव में **एक ही मौलिक आत्म-सत्ता** पर प्रतिष्ठित होती है। **'पशु'**-भाव को जब **वास्तविक स्वरूप की अनुभूति** होती है, तब वह **'पशु'-भाव से** मुक्त होकर **'पति'**-भाववाला बन जाता है।

'हेय' एवं 'उपादेय'

'काश्मीर' में **सम-रसता** से युक्त **'ज्ञान'** ही उपयोगी है, यह बहुत पहले ही जान लिया गया था। उदाहरण के रूप में **'तन्त्रालोक'** आदि ग्रन्थों में हुई चर्चाओं को देखिए–

इह ज्ञानं मोक्ष-कारणम् ।

संसार में **परम पुरुषार्थ** अर्थात् श्रेष्ठतम की प्राप्ति **'ज्ञान'** से होती है।

बन्ध-निमित्तस्य अज्ञानस्य विरोधकत्वात्।

बन्धन में डालनेवाला होने के कारण **'अज्ञान'** से **'ज्ञान'** का विरोध होता है।

द्विविधं च अज्ञानं–बुद्धि-गतं पौरुषं च।

'अज्ञान' अर्थात् संकुचित बनानेवाली जानकारियाँ दो प्रकार की होती हैं– (१) **'बुद्धि'**-सम्मिलित। (२) **'पौरुष'** अर्थात् **'शौर्य'**- सम्मिलित।

बुद्धि-गतं (अज्ञानं)–अनिश्चय-स्वभावं, विपरीत-निश्चयात्मकं च।

'बुद्धि'-सम्मिलित संकुचित जानकारियाँ–अनिश्चय अर्थात् अस्पष्ट स्वभाववाली और नियम-विरुद्ध-योजनाओंवाली होती हैं।

पौरुषं (अज्ञानं)–विकल्प-स्वभावं, संकुचित-प्रथात्मकम् ।

'पौरुष' अर्थात 'शौर्य'-सम्मिलित संकुचित जानकारियाँ–कूट-युक्ति-स्वभाववाली तथा संकुचित प्रसिद्धि चाहनेवाली होती हैं।

पौरुषं अज्ञानं–दीक्षादिना निवर्तेतापि, किन्तु दीक्षाऽपि बुद्धि-गते अनध्यवसायात्मके अज्ञाने सति न सम्भवति–हेयोपादेय-निश्चय-पूर्वकत्वात् तत्त्व-शुद्धि-शिव-योजना-रूपाया दीक्षाया इति।.....

'पौरुष' अर्थात् शौर्य-सम्मिलित संकुचित जानकारियों के दूषित प्रभाव को **'उपदेशों'** आदि के द्वारा दूर नहीं किया जा सकता क्योंकि अच्छी बातों के ग्रहण करने की इच्छा ही नहीं रहती। **'हेय'** अर्थात् त्यागने योग्य और **'उपादेय'** अर्थात् ग्रहण करने योग्य सर्व-कल्याणकारी योजना होने पर ही **'उपदेशों'** का प्रभाव होता है।

अध्यवसायात्मक बुद्धि-निष्ठ ज्ञान अर्थात् लगातार उपादेय विचारों को ग्रहण करना ही मुख्य बात है। इससे ही **'पौरुष'** अर्थात् **'शौर्य'-सम्मिलित अज्ञान** नष्ट होता है। इसके अभ्यास से **'सम-रसता'** से युक्त **ज्ञान** उदित होता है। अर्थात् **'मैं ही भिन्न-भिन्न रूपों में प्रकट हो रहा हूँ'**–ऐसा प्रत्यक्ष अनुभव होने लगता है।

प्राचीन 'काश्मीर'

- प्राचीन काल में 'काश्मीर' का नाम 'सती-सरः' अर्थात 'सती-सरोवर' था।
- महर्षि कश्यप के प्रयास से जल-मग्न 'काश्मीर'-मण्डल की भूमि प्रकट हुई थी।
- 'काश्मीर'-मण्डल में ऐसा कोई स्थल न था, जो 'पुण्य'-क्षेत्र या 'तीर्थ'-क्षेत्र न हो।
- 'काश्मीर' का एक और पुराना नाम था-सरस्वती या शारदा देश। यह विद्या का स्थान था। इसे 'देव-क्षेत्र' कहा जाता था।
- 'काश्मीर' की अधिष्ठात्री-माता शारदा हैं, ऐसी मान्यता थी।
- 'श्रीसरस्वती रहस्योपनिषद्' में लिखा है-

  नमस्ते शारदा देवी, काश्मीर-पुर-वासिनी।
  त्वामहं प्रार्थये नित्यं, विद्या-दानं च देहि मे।।
- 'काश्मीर'-प्राचीन काल में दर्शन, आगम, व्याकरण, काव्य का क्षेत्र था। यहाँ प्रकाण्ड विद्वानों, ऋषियों व मुनियों का आगमन बराबर होता था। आचार्य शङ्कर के समान अनेक सर्वज्ञ विभूतियाँ 'काश्मीर' में थीं।
- प्रसिद्ध 'शारदा-तिलक-तन्त्र' के प्राचीन टीकाकार श्रीराघव भट्ट ने लिखा है कि आचार्य शङ्कर ने 'काश्मीर' की अधिष्ठात्री भगवती शारदा के दर्शन किए थे। वहाँ रहकर उन्होंने प्रसिद्ध तन्त्र-शास्त्र 'प्रपञ्च-सार' की रचना पूर्ण की थी। यथा-

  ''.....काश्मीर-मण्डले प्रसिद्धेयं देवता। तत्र निवसता आचार्येण अयं ग्रन्थः कृतः.....।''
- नवीं शताब्दी के कवि श्रीहर्ष कहते हैं कि 'काश्मीर' के लोग चौदह विद्याओं का अध्ययन करते थे।
- विल्हण के अनुसार प्राचीन-काल में 'काश्मीर' की नारियाँ भी संस्कृत भाषा में बोलती थीं।
- शैव-सिद्धान्त, शैव-वेदान्त, वीर-शैव आदि मतों का मूल-स्थान 'काश्मीर' ही है।

प्रकाशक/मुद्रक : परावाणी आध्यात्मिक शोध-संस्थान, प्रयाग-राज